3डी फिल्म क्या है?

अफसाना पठान

हम जब भी 3डी की बात करते हैं तब हमारे दिमाग में सबसे पहले 3डी फिल्मों की तस्वीर उभरती है। जब हम 3डी फिल्म देखने जाते हैं तो हमें एक विशेष प्रकार का चश्मा दिया जाता है जो फिल्म देखते समय लगाना होता है। इसका मतलब यह है कि सामान्य आंखों से 3डी फिल्म दिखाई नहीं देती है, इसे देखने के लिए लाल और नीले रंग के चश्मों की आवश्यकता होती है। इससे फिल्मों के दृश्यों में गहराई नज़र आती है। सवाल यह है कि जब हमें सामान्य आंखों से गहराई नज़र आती है तो ऐसा क्यों है कि फिल्म देखते समय बगैर चश्मे के हम गहराई का एहसास नहीं कर पाते?

हमारे चेहरे पर दो आंखें कुछ दूरी पर स्थित होती हैं। इस कारण से हमारे सामने रखी वस्तु को दोनों आंखें थोड़ा अलग-अलग कोण से देखती हैं - बाईं आंख थोड़ा बाईं ओर से तथा दाईं आंख दाईं ओर से देखती है। अब दोनों आंखें अपने द्वारा देखे गए दृश्य का संकेत मस्तिष्क तक पहुंचाती हैं, और मस्तिष्क इन दोनों दृश्यों को मिलाकर एक चित्र बनाता है जिसके कारण हमें वह वस्तु पूरी दिखाई देती है। चूंकि दोनों आंखों ने थोड़ा अलग-अलग देखा है इसलिए हमें वस्तु की साइड भी दिखती है और हम गहराई का अनुभव करते हैं।

3डी फिल्मों की शुरुआत स्टीरियोस्कोपिक चित्रों से हुई थी। स्टीरियोस्कोपिक चित्र बनाने के लिए एक ही दृश्य के दो चित्र एक ही कैमरे से खींचे जाते हैं। दोनों चित्र कैमरे की स्थिति को थोड़ा बदलकर खींचे जाते हैं। स्थिति को लगभग उतना ही बदला जाता है जितनी हमारी दो आंखों के बीच की दूरी है। अब इन दृश्यों को एक साथ रखकर एक आंख से एक दृश्य को और दूसरी आंख से दूसरे दृश्य को एक साथ देखने की कोशिश करते हैं। एक साथ देखने पर दोनों दृश्यों से मिलकर एक तीसरा चित्र बनता है और इसमें गहराई नज़र आने लगती है। और यह गहराई ही 3डी का एहसास कराती है। दरअसल बाइस्कोप में इसी तरीके का इस्तेमाल किया जाता है।

स्टीरियोस्कोपिक चित्रों में 3डी देखने के लिए आइने

का इस्तेमाल भी किया जाता है, इस प्रक्रिया को 'मिरर स्टीरियोस्कोपी' कहते हैं। इस तकनीक को सबसे पहले सर व्हिटस्टोन ने सन 1828 में खोजा था। इसमें भी दो चित्र कैमरे की स्थिति को उपरोक्तानुसार बदलकर खींचे जाते हैं। फिर इनमें से एक का दर्पण प्रतिबिंब तैयार कर लिया जाता है। अब इन्हें एक-दूसरे से सटाकर रखते हैं और इनके बीच एक आइना रखते हैं। अब एक आंख से एक चित्र और दूसरी आंख से दूसरे चित्र का आइने में दिख रहा प्रतिबिंब देखते हैं। जब इन दोनों चित्रों को इस तरह से एक साथ देखते हैं तो मिलकर जो चित्र बनता है उसमें गहराई या 3डी का एहसास होता है।

गहराई देखने की बात को हम एक प्रयोग द्वारा समझ सकते हैं। एक पेंसिल को थोड़ी दूरी पर इस तरह खड़ा रखते हैं कि उसका नुकीला सिरा ऊपर की ओर हो। अब इस पेंसिल के नुकीले सिरे पर दूसरी पेंसिल का नुकीला सिरा टिकाने की कोशिश करते हैं। पहले दोनों आखें खुली रखकर और फिर एक आंख बंद करके। हम पाते हैं कि जब हमारी दोनों आंखें खुली थीं तब हम उस पेंसिल के नुकीले सिरे को आसानी से ढूंढ पाए थे। लेकिन जब एक आंख बंद थी तब नुकीले सिरे को खोजने में परेशानी हुई थी। एक आंख से देखने पर हमें उसकी दूरी का अंदाज़ नहीं लग पाता है और हम दूसरी पेंसिल को थोड़ा दूर या पास टिका देते हैं। यही है 3डी प्रभाव जिसमें गहराई भी निहित होती है।

इसी के बाद 3डी फिल्मों की शुरुआत हुई। सबसे पहली 3डी फिल्म *बवाना डेविल* सन 1952 में अंग्रेज़ी भाषा में बनाई गई थी। उसके बाद कई 3डी फिल्में आई हैं।

सामान्य फिल्मों में हमें पर्दे पर एक सपाट दृश्य नज़र आता है। इसमें गहराई का एहसास अन्य कारणों से होता है। जैसे यदि कोई व्यक्ति पेड़ के पीछे से निकल आया है तो हम मानते हैं कि पेड़ के पीछे जगह होगी। इसी प्रकार से यदि कोई ट्रेन कार के मुकाबले छोटी नज़र आती है तो हम मानते हैं कि ट्रेन दूर है क्योंकि हम जानते हैं कि वास्तव में ट्रेन कार से बड़ी होती है और यदि वह छोटी नज़र आ रही है तो यह दूरी के कारण ही होगा। यानी हम दूरियों के अंदाज़ के लिए अन्य सुरागों का सहारा लेते हैं।

दूसरी ओर, 3डी यानी त्रिआयामी फिल्मों के दृश्यों में लंबाई, चौड़ाई के साथ-साथ गहराई भी नज़र आती है। 3डी फिल्में दो कैमरों की मदद से बनाई जाती हैं या एक ही कैमरे में दो चित्र एक साथ खींचने की व्यवस्था होती है। इन फिल्मों को देखने के लिए विशेष प्रकार के लाल व नीले रंग के चश्मों का इस्तेमाल होता है। वैसे अब 3डी फिल्मों की तकनीक में भी बदलाव आया है।

3डी फिल्मों के निर्माण में दो प्रणालियां इस्तेमाल की जाती हैं - ऐनाग्लिफिक और पोलेराइज़्ड।

ऐनाग्लिफिक 3डी प्रणाली द्वारा ब्लैक एंड व्हाइट फिल्में ही बनाई जा सकती हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि क्या फिल्म बनाते समय कैमरों पर अलग-अलग रंग के फिल्टर लगाए जाते हैं या फिल्म दिखाते समय जिन दो प्रोजेक्टर्स का इस्तेमाल किया जाता है, उनमें से एक पर लाल और दूसरे पर नीला फिल्टर लगा होता है। इन फिल्मों को देखने के लिए एक आंख पर लाल व दूसरी पर नीला फिल्टर लगा चश्मा पहनना पड़ता है। लाल रंग के फिल्टर से नीले रंग वाली और नीले रंग के फिल्टर से लाल रंग की तस्वीरें दिखाई देती हैं। यदि आप करके देखेंगे तो पता चलेगा कि दोनों ही तस्वीरें काली दिखाई देंगी। हमारी दोनों आंखों में अलग-अलग प्रतिबिंब

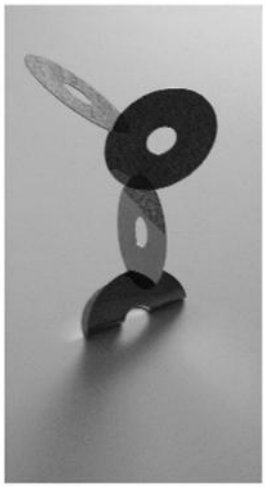

बनते हैं और हमारा दिमाग उन्हें मिलाकर त्रिआयामी चित्र बनाता है।

पोलेराइज़्ड 3डी में प्रोजेक्टर पर पोलेराइज़्ड फिल्टर का उपयोग किया जाता है। इसको देखने के लिए भी पोलेराइज़्ड फिल्टर ही उपयोग किए जाते हैं। जब प्रकाश फिल्टर से गुज़रता है तब ध्रुवण के फलस्वरुप दो अलग-अलग प्रतिबिंब बनते हैं जिनका रंग धूसर या ग्रे होता है। इसके माध्यम से सभी रंगों की 3डी फिल्में बनाई जा सकती हैं। इन फिल्मों को देखने के लिए विशेष किस्म के परावर्तक पर्दे का इस्तेमाल करना पड़ता है।

पहले 3डी फिल्में केवल सिनेमाघरों में ही दिखाई जा सकती थीं। लेकिन अब 3डी तकनीक पर आधारित टीवी बाज़ार में आने वाले हैं। सोनी कंपनी ने 3डी तकनीक पर आधारित टीवी का निर्माण कर लिया है जिसे वह जल्द ही बाज़ार में उपलब्ध कराने वाले हैं। लेकिन यह अभी नहीं कहा जा सकता कि इस तरह के टीवी को देखने के लिए भी विशेष प्रकार के चश्मों का उपयोग किया जाएगा या नहीं। ***(स्रोत फीचर्स)***